अङ्क-२५
जनवरी-जून २०१५

वेदविद्या
ISSN-2230-8962

वैदिक ऋषिकाओं के मन्त्रों में निहित गूढ तत्त्वज्ञान

डॉ. अर्चना कुमारी दुबे

ऋग्वेद से ज्ञात होता है कि उस युग में स्त्री-शिक्षा का यथेष्ट प्रचार था। स्त्रियाँ न केवल अध्ययन करती थीं, मन्त्रों का दर्शन भी करती थीं। पुरुष मन्त्र-द्रष्टा को ऋषि तथा स्त्री मन्त्र-द्रष्टा को ऋषिका कहा गया है। इन ऋषिकाओं द्वारा दृष्ट मन्त्र इनके ज्ञान की श्रेष्ठता के प्रमाण हैं। इनकी आध्यात्मिक क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण भूमिकाएँ रही हैं -

वाक्

इस सूक्त में वाक् ने परमेश्वर के स्तुतिपरक मन्त्रों का दर्शन किया है।[१] कुछ विद्वान् वाक् को कल्पित ऋषिका मानते हैं।[२] परन्तु सायण और बृहद्देवताकार ने इन्हें मन्त्र-द्रष्ट्री ऋषिका कहा है।[३] वाक् को अम्भृण ऋषि की पुत्री होने के कारण आम्भृणी कहा जाता है।[४] वागाम्भृणी द्वारा इस सूक्त में वाक् के रूप, गुण तथा कार्यों का वर्णन किया गया है। मित्रावरुण, इन्द्राग्नि तथा अश्विनी-कुमारों को धारण करने वाली वाक् रुद्रों, वसुओं, आदित्यों तथा विश्वेदेवों के साथ विचरण करती हैं।

अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चराम्यहमादित्यैरुत विश्वदेवैः।
अहं मित्रावरुणोभा बिभर्म्यहमिन्द्राग्नी अहमश्विनोभा॥[५]

इस सूक्त में वाक् के दोनों रूपों-लौकिक तथा अलौकिक का वर्णन है। लौकिक अर्थ में वाक् से तात्पर्य है - वाणी।[६] जब मनुष्य अपने आप को दूसरे के समक्ष व्यक्त करता है, तब वह वाणी का प्रयोग करता है। जब कोई गति होती है चाहे वह चेतन पदार्थ से हो या अचेतन से, तब उसमें से शब्द उत्पन्न होता है। वह शब्द ही सभी व्यक्तियों की प्रगति का आधार है। इसके बिना व्यक्ति परस्पर भाव-सम्प्रेषण

---

[१] सच्चितसुखात्मकः परमात्मा देवता। ऋग्वेद, १०/१२५ का सायण-भाष्य।
[२] ऋग्वैदिक आर्य, पृ. सं. २३५।
[३] वाङ्नाम्नी ब्रह्मविदुषी स्वात्मानमस्तौत्। अतः ऋषिः। वही, १०/१२५ का सायण-भाष्य, बृहद्देवता, ८४।
[४] अम्भृणस्य महर्षेर्दुहिता वाङ्नाम्नी ब्रह्मविदुषी स्वात्मानमस्तौत्। ऋग्वेद, १०/१२५ का सायण-भाष्य।
[५] ऋग्वेद, १०/१२५/१।
[६] उच्यते यया सा। वैदिककोषः, पृ. /८४१।

में समर्थ ही नहीं हो सकते और बिना परस्पर विचार-विनिमय के संस्कृति व सभ्यता का विकास नहीं हो सकता। इसीलिए विद्वानों ने कहा है कि यदि वाक् न होती तो सम्पूर्ण संसार अज्ञान के अन्धकार में डूबा होता।[७] अलौकिक अर्थ में वाक् परमेश्वर की शक्ति है,[८] जिससे सृष्टि सम्भव होती है। ब्रह्मा की शक्ति ही समस्त प्राणियों में आत्मा के रूप में विद्यमान है। इसीसे प्राणियों में चेतना रहती है। आत्मा से शून्य देह चेतना-रहित हो जाती है। इस वाक् का उत्पत्ति-स्थल समुद्र अर्थात् अन्तरिक्ष में विद्यमान ब्रह्म है।[९] ब्रह्म से अतिशय तादात्म्य के कारण वाक् को ब्रह्म कहा गया है।[१०] ब्रह्म के तेज से ही देवताओं की स्थिति है। निष्कर्षतः वाक् परमेश्वरी शक्ति है, जो सबका उत्पत्ति, पालन तथा संहार करती है। इस वाक् से ही जगत् की प्रतिष्ठा है, इसके अनुशासन में ही सब रहते हैं। वैदिक ऋषिकाओं द्वारा दृष्ट सूक्तों में यही एक ऐसा सूक्त है जिसमें ऋषिका उत्तमपुरुष, एकवचन में 'अहम्' पद का प्रयोग करती है। ऋषिका के द्वारा प्रयुक्त 'अहम्' पद की सार्थकता के सम्बन्ध में विद्वानों का मत है कि इस सूक्त में वाक् द्वारा अपने अद्भुत सामर्थ्य का बखान अहम् पद द्वारा किया गया है। इस प्रकार के वैदिकसूक्तों में बृहदारण्यक उपनिषद् के 'अहं ब्रह्मास्मि' महावाक्य द्वारा स्वयं में परम तत्त्व की साक्षात् अनुभूति की मूल-प्रवृत्ति के दर्शन किए जा सकते हैं।[११] इस प्रकार यह सूक्त वाणी, आत्मा, प्रकृति व नारी से सम्बद्ध नाना अर्थों को प्रकट करता हुआ ऋषिका वागाम्भृणी की आध्यात्मिक मनीषा को व्यक्त करता है।

शश्वती

ऋषिका शश्वती ने पुरुषत्व को प्राप्त हुए अपने पति आसङ्ग को सम्बोधित करके अष्टम मण्डल के अन्तर्गत प्रथम सूक्त के 34 वें मन्त्र का दर्शन किया है।[१२] कहा जाता है कि अङ्गिरस् की पुत्री शश्वती का पति आसङ्ग किसी कारणवश नपुंसक हो गया था। उसके नपुंसकत्व से खिन्न होकर शश्वती ने अत्यधिक तप किया, जिससे पुनः आसङ्ग ने पुरुषत्व को प्राप्त किया।[१३] ऋषिका पौरुषयुक्त अपने पति की प्रशंसा करते हुए उसे अत्यधिक कल्याणकारी भोग साधनों को धारण करने वाला कहती है।[१४]

---

[७] इदमन्धं तमः कृत्स्नं जायेत भुवनत्रयम्।
यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरासंसारं न दीप्यते॥ (वाक्यपदीय) काव्यादर्श, १/४ में दण्डी द्वारा उद्धृत।
[८] प्रजापतिर्वा इदमेक आसीत्तस्य वागेव स्वमासीद् वाक् द्वितीया स ऐक्षते। काठकसंहिता, १२/५।
[९] समुद्रेऽन्तरिक्षेऽप्स्वम्भवेयु देवशरीरेषु मम कारणभूतं ब्रह्म चैतन्यं वर्तते। ऋग्वेद, १०/१२५/७ का सायण-भाष्य।
[१०] वाग्वै ब्रह्म। बृहदारण्यकोपनिषद्, ४/१/२।
[११] ऋग्वेद में दार्शनिक तत्त्व, पृ. १५४।
[१२] ऋग्वेद, ८/१/३४ का सायण-भाष्य।
[१३] वही, ८/१/३४ का सायण-भाष्य।
[१४] वही, ८/१/३४।

शश्वती ने स्त्री की मर्यादा को बनाए रखा तथा घोर तप से अपने रुग्ण पति के शरीर को स्वस्थ किया। दयानन्द सरस्वती इसका दार्शनिक अर्थ लेते हैं। उनके अनुसार इस आत्मा का स्थूल देह भी उसीके अनुरूप ही दिखता है। जिस प्रकार जङ्घा स्वयं शरीर को आश्रय देते हुए भी अपनी स्थिति के लिए शरीर का आश्रय ग्रहण करती है, उसी प्रकार अङ्गादि अवयवों से रहित आत्मा अपनी स्थिति के लिए अङ्गादि देह का आश्रय ग्रहण करती है। इस प्रकार की आत्मा के साक्षात्कार के लिए ही उसकी सहयोगिनी बुद्धि उत्तम भोगों के साधनयुक्त देह को धारणीय तथा पोषणीय बताती है। स्वामी दयानन्द ने आसङ्ग को आत्मा तथा शश्वती को उस आत्मा का साक्षात्कार करने वाली बुद्धि कहा है।[१५]

सिकता - निवावरी

ऋग्वेद के नवम मण्डल के 86 वें सूक्त के 11वें से 20 वें मन्त्रों तक 10 मन्त्रों की द्रष्ट्री सिकता-निनावरी हैं। इन्होंने इन मन्त्रों का दर्शन गृत्समद, शौनक आदि ऋषियों के साथ किया है। ऋषिका के द्वारा सोम से आनन्द-प्राप्ति की कामना उनकी दार्शनिक दृष्टि को प्रकट करती है। सोम रस-रूप है। उपनिषदों में "**रसो वै सः**" कहकर रस को ब्रह्म से अभिन्न माना गया है। ब्रह्म के रूप में सत्, चित् तथा आनन्द - ये तीन तत्त्व माने गये हैं। सोम आनन्दमय है, अतः वह आनन्द-प्रदाता भी है। इससे सोम के ब्रह्म-रूप का भी ज्ञान होता है।

शिखण्डिनी - काश्यपी

ऋषि कश्यप की दो पुत्रियों शिखण्डिनी - काश्यपी ने काण्व, पर्वत तथा नारद ऋषियों के साथ सोमदेव की स्तुति की है।[१६] ऋषिकाएँ शिखण्डिनी - काश्यपी भी सोम के ब्रह्ममय-रूप से प्रभावित हैं। वे सोम से अन्धकार के नाश करने की प्रार्थना करती हैं। सोम सत् का प्रतीक है और अन्धकार असत् का। सत् की उपस्थिति से असत् का स्वयमेव नाश हो जाता है। ऋषिकाओं द्वारा दी गई सोम से सम्बद्ध उपमाएँ उनके स्त्रियोचित मातृ-भाव को प्रकट करने के साथ ही सोम के प्रति उनकी अतिशय प्रियता को भी व्यक्त करती हैं। वे सोम को, माता-पिता द्वारा प्रेमपूर्वक सज्जित किए जाने वाले शिशु से उपमित करती हैं तथा उसमें जल के मिलाने को गाय से बछड़े को मिलाने की उपमा देती हैं। वे सोम को पापों से हटाकर सत्कार्यों के प्रति प्रेरित करने वाले सन्मित्र के समान बताती हैं, जो सोम अपने दार्शनिक-रूप

---

[१५] वही, ८/१/३४ का दयानन्द-भाष्य।
[१६] वही, ९/१०४ का सायण-भाष्य।

से अज्ञान का नाश कर स्तोता को परम ज्ञान का दर्शन कराता है। ऋषिकाओं द्वारा दी गई ये उपमाएँ वेद के ज्ञान-गम्भीर विषय को भी वत्सलता से सिक्त कर सरल व हृदयग्राह्य बना देती हैं।

यमी

दशम मण्डल में यम-यमी का संवादपरक एक सूक्त सङ्ख्या १० पर प्राप्त होता है। सूक्त के १, ३, ५, ६, ७, ११, १३ मन्त्रों की द्रष्ट्री यमी तथा देवता यम हैं। अन्य मन्त्रों के द्रष्ट्रा यम हैं। यमी सृष्टि-प्रवर्तन के लिए यम का आह्वान करती है परन्तु यम इसे अनुचित कहकर ठुकरा देते हैं।[१७] अतः इस सूक्त को सर्वदा आचार, मर्यादा की शिक्षा देने वाला ही कहा जा सकता है। यहाँ वैदिक ऋषिका ने प्रतिकूल परिस्थिति की योजना कर यम के व्यवहार द्वारा भारतीयसंस्कृति की आचार-श्रेष्ठता को प्रकाशित करना चाहा है। वैदिक ऋषिका द्वारा इस कथात्मक सूक्त से मानव-जाति के लिए उच्छृङ्खल काम-दोष को नियन्त्रित करने का भी उपदेश दिया गया है। यह सूक्त एक ओर द्युलोक, पृथ्वीलोक के अतिरिक्त उनके मध्य में स्थित पितृलोक की जानकारी देता है।[१८] ऋषिका द्वारा किए गए पितरों के वर्णन से यह भी ज्ञात होता है कि चाहे कठोर तपश्चर्याओं को करने वाले तपस्वी हों या वीर योद्धा, सहस्त्रों दान-यज्ञादि को करने वाले पुण्यकर्ता हों या ऋत का पालन करने वाले मनस्वी जन, किसी का भी जीवन चिरस्थायी नहीं है, सभी की मृत्यु अवश्यम्भावी है। अतः व्यक्ति को इस संसार में निरासक्तभाव से कर्मों को करते हुए सत् तत्त्व प्राप्ति का उपाय करना चाहिए, जिससे श्रेष्ठ लोकों की प्राप्ति हो सके।

यह सूक्त जीव-मात्र से सम्बद्ध है, अतः व्यापक महत्त्व का है। दृश्य जगत् के परे विद्यमान रहस्य को कर्मसिद्धान्त के तर्क तथा श्रद्धा-भाव के द्वारा देखा गया है। ऋषिका यमी ने इस सूक्त में नवीन तथ्य का उद्घाटन किया है।[१९]

अदिति

ऋग्वेद के दशम मण्डल के ७२ वें सूक्त की ऋषिका दक्षदुहिता अदिति हैं।[२०] इनकी माता का नाम असिक्नी कहा गया है।[२१] अदिति ने इस सूक्त का दर्शन बृहस्पति व आङ्गिरस ऋषियों के साथ किया

---

[१७] ऋग्वेद, १०/१०/२।
[१८] ऋषीन् तपस्वतो यम तपोजाँ अपि गच्छतात्। वही, १०/१५४/५।
[१९] ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या। विवेकचूडामणि, २०।
[२०] दक्षस्य दुहितादितिः। ऋग्वेद, १०/७२ का सायण-भाष्य।

है।[२२] इस सूक्त में देवोत्पत्ति, सृष्टि के आरम्भ तथा विकास का निरूपण है। यह सूक्त दार्शनिक तत्त्वों का विवेचन करने के कारण, दार्शनिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्व का है।

विद्वानों ने दक्ष को ब्रह्म तथा अदिति को उसकी शक्ति परावाक् के रूप में माना है।[२३] वस्तुतः ब्रह्म की शक्ति परावाक् ही सम्पूर्ण सृष्टि की कारणभूता है। अदिति से उत्पन्न होने के कारण ही अपत्य अर्थ में देवगण आदित्य कहे गए हैं। ऋषिका द्वारा कही गई असत् से सत् की उत्पत्ति को सायणाचार्य इस प्रकार विवेचित करते हैं - असत् अर्थात् नामरूप-रहित उपादानकारण ब्रह्म से नाम-रूपादि-विशिष्ट देवों की उत्पत्ति हुई।[२४] वेङ्कटमाधव के अनुसार असत् अर्थात् ब्रह्म से देवताओं का कारणभूत सत् उत्पन्न हुआ।[२५] उद्गीथ का मत दोनों से भिन्न है। उनके अनुसार अनुपलब्ध होने के कारण असत् अर्थात् अव्यक्त नामक तत्त्व से सत् अर्थात् व्यक्त महापुरुष (हिरण्यगर्भ) उत्पन्न हुआ।[२६] असत् से सत् की उत्पत्ति के सम्बन्ध में राधाकृष्णन् की टिप्पणी है कि प्रारम्भ में असत् था जिससे सत्ता का प्रादुर्भाव हुआ। प्रारम्भिक अवस्था नितान्त असत् की नहीं है। क्योंकि, इस सूक्त में एक ऐसे तत्त्व को, जो बिना श्वासोच्छ्वास प्रणाली के भी जीवित है, स्वीकार किया गया है। सत् और असत्-सापेक्ष पारिभाषिक शब्द हैं, जो उस महान् एक के लिए प्रयुक्त नहीं किए जा सकते, जो सब प्रकार के विरोधों से परे है। असत् का अर्थ केवल यही है कि जो इस समय हमें गोचर नहीं है। सत्तावान् असत् स्वरूप से प्रकट हुआ। यहाँ भी इसका अर्थ यह नहीं है कि सत् असत् के अन्दर से आता है। इसका तात्पर्य केवल यही है कि प्रकट सत्ता अस्पष्ट असत् से प्रादुर्भूत होती है।[२७]

सरमा

संवादपरक सूक्तों की श्रृङ्खला में ऋषिका सरमा तथा पणिगणों के परस्पर संवाद का वर्णन करने वाला ऋग्वेद के दशम मण्डल का १०३वां सूक्त है।[२८] श्रीअरविन्द के अनुसार सरमा ज्ञानशक्ति है, जो

---

[२१] As mentioned above, Aditi the daughter of Daksa and Asikni are Mentioned with Brhaspati as an optional seer of X/72- The seers of the Regveda, Page 257.

[२२] लोकनाम्नः पुत्रो बृहस्पतिरांगिरस एव वा बृहस्पतिऋषिः। अथवा दक्षस्य दुहिता अदिति ऋषिः। वही, १०/७२ का सायण-भाष्य।

[२३] वैदिक दर्शन, पृ. ८२।

[२४] नामरूप विवर्णितत्वेनासत्समानादब्रह्मणः सकाशात्सन्नामरुपविशिष्टं देवादिकमजायत। वही, १०/७२/२ का सायण-भाष्य।

[२५] देवानां कारणभूतं सत् प्रत्ये युगे असतः ब्रह्मणः अजायत। वही, १०/७२/२ का वेंकटमाधव कृत भाष्य।

[२६] अव्यक्तात् व्यक्तं पुरुषाख्यं जातम्। वही, १०/७२/३ का उद्गीथ भाष्य।

[२७] भारतीय दर्शन, भाग प्रथम, पृ. ८५।

[२८] एनां मित्रीकर्तुं संवादमकुर्वन्। वही, १०/१०८ का सायण-भाष्य।

अज्ञानान्धकार में निगूढ़ ज्ञान का हमें साक्षात्कार कराती है।[२९] वस्तुतः ग्रिफ्रिथ के द्वारा ढूँढी जाने वाली गायों के लिए प्रकाश किरण कहा जाना भी इसी ओर सङ्केत करता है। द्वितीय मन्त्र में आया रसा शब्द का अर्थ रस (जल) को धारण करने वाली नदी किया गया है।[३०] इसी रसा को पारकर सरमा पणिगणों तक पहुँची थी। रस को आनन्द की सञ्ज्ञा भी दी गई है। जब ब्रह्म की प्राप्ति का इच्छुक जन निर्विकल्पक-समाधि तक पहुँचता है तब उसके सम्मुख विघ्न के रूप में रसास्वाद[३१] उपस्थित होता है, उसको पार करके ही वह अज्ञान का नाश कर ब्रह्म-ज्ञान की प्राप्ति करने में सफल होता है। इस प्रकार इस सूक्त का आत्मसाक्षात्कार-परक अर्थ भी लिया जा सकता है। इस सूक्त से वैदिक ऋषियों के दार्शनिक गूढ़ अर्थों को कथा-रूप में कहने की काव्यात्मक-वृत्ति के दर्शन होते हैं, साथ ही अपने स्वामी इन्द्र के प्रति सरमा के अटूट श्रद्धा-भाव से भाव-ध्वनि का सौन्दर्य भी अनुभूत होता है। साहित्य-मर्मज्ञों ने तो इन सूक्तों की संवादशैली को देखते हुए उन्हें भविष्य में विकसित हुई नाट्यविधा का बीज माना है।

इन्द्राणी

दशममण्डल के 145 वें सूक्त में ऋषिका इन्द्राणी ने सपत्नीबाध विषय का प्रतिपादन किया है। अतः इस सूक्त का देवता सपत्नीबाध ही है।[३२] सायण सपत्नी का अर्थ करते हैं - **"समान एकः पतिर्यस्याः सा।"**[३३] अर्थात् जिन पत्नियों का एक (समान) पति हो, वे परस्पर सपत्नियाँ कहलाती हैं। इस प्रकार की सपत्नी का बाध करना अर्थात् पति पर उसके प्रभाव को दूर करना यहाँ वर्णित है। वी.पी. राहुरकर इन्द्राणी को मानुषी नहीं मानते हैं, परन्तु सायणाचार्य तथा बृहद्देवताकार शौनक ने इनको मन्त्रद्रष्ट्री ऋषिका कहा है।[३४]

इस सूक्त से इन्द्र के प्रति इन्द्राणी के प्रेम की अतिशयता व्यक्त होती है। वह अपने पति की, किसी अन्य स्त्री के प्रति, सहृदयता के भाव को भी सहन नहीं कर पाती हैं। इसीलिए पति-प्रेम की प्राप्ति के लिए मन्त्र, औषधि आदि का आश्रय लेती हैं। साथ ही यह भी ज्ञान होता है कि उस काल में ऐसी विशिष्ट औषधियाँ पायी जाती थीं, जो मोहन, वशीकरण आदि तान्त्रिक कार्यों में सहायक थीं। इस सूक्त में मानव-मन का अत्यन्त मनोवैज्ञानिक चित्रण है। इन्द्राणी अपनी सपत्नियों के नामों का उल्लेख नहीं

---

[२९] वेद-रहस्य, पूर्वार्द्ध, पृ. २७८।
[३०] रसायाः नद्या। वही, १०/१०८ का सायण-भाष्य।
[३१] निर्विकल्पकस्य लयविक्षेपकषाय-रसात्वादलक्षणाश्चत्वारो विघ्नाः सम्भवन्ति। वेदान्तसार, ३२।
[३२] ऋग्वेद, १०/१४५ का सायण-भाष्य।
[३३] वही, १०/१४५ का सायण-भाष्य।
[३४] सूक्तमिन्द्राण्या आर्षम्। वही, १०/१४५ का सायण-भाष्य, बृहद्देवता, ८३।

करती क्योंकि वह उनका नाम नहीं लेना चाहती। व्यक्ति जिससे प्रेम करता है, बार-बार उसका नाम तो सुनना और बोलना चाहता है परन्तु जिसके प्रति वह क्रोध और वैर से युक्त होता है, उसका नाम सुनते ही वह क्रुद्ध हो जाता है। इसी कारण इन्द्राणी को विद्या (ज्ञान) तथा सपत्नी को अविद्या (अज्ञान) का प्रतीक माना जा सकता है।[३५] व्यक्ति माया के प्रपञ्चों से उसकी ओर आकृष्ट होता है, परन्तु ज्ञान अपने प्रयत्नों यम, नियम आदि द्वारा अज्ञान (मिथ्यात्व) से उसको परिचित बनाकर माया-जाल से मुक्त कर देता है। मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक अर्थों का युगपत् सङ्केत करने वाला यह सूक्त आपस्तम्ब गृह्यसूत्र में भी सपत्नीबाध के लिए उल्लिखित है।

श्रद्धा

कामगोत्र में उत्पन्न हुई ऋषिका श्रद्धा कामायनी हैं।[३६] दार्शनिक अर्थ में श्रद्धा पुरुष (ब्रह्म) की शक्तिरूपा प्रकृति है, जिसके संयोग (प्रेरणा) को प्राप्त करके ही, सृष्टि-रचना का आरम्भ व विकास होता है। भारतीयसंस्कृति के अनुसार इस सूक्त का इतना अधिक महत्त्व है कि जातकर्मसंस्कार में बालक को प्रथम बार माता का स्तन पान कराते समय मेधाजनन कृत्य में श्रद्धासूक्त का पाठ किया जाता है,[३७] जिससे उसे जीवनपोषक दूध की तरह जीवन-धारिका श्रद्धा को ग्रहण करने की शिक्षा भी मिलती है।

सार्पराज्ञी

ऋषिका सार्पराज्ञी ने सूर्यदेव का स्तवन किया है।[३८] बृहद्देवताकार ने सार्पराज्ञी को आत्मा की भाववृत्ति का वर्णन करने वाली ऋषिकाओं के वर्ग में रखा।[३९] विशेषतः उल्लेखनीय यह है कि सार्पराज्ञी द्वारा दृष्ट यह सूक्त चारों वेदों में अलग-अलग देवताओं के निमित्त कहा गया प्राप्त होता है। ऋग्वेद में इस सूक्त के देवता आत्मा अथवा सूर्य हैं। यजुर्वेद में अग्नि, सामवेद में आत्मा व सूर्य तथा अथर्ववेद में सूर्या देवता हैं। अतः ये देवस्तवन में मन्त्र दर्शन करने वाली ऋषिका ही कही जा सकती है। वी.पी. राहुरकर के अनुसार इन मन्त्रों में प्रातःकालीन देवों अग्नि, सूर्य तथा उषा का निर्देश किया गया है। सूर्य

---

[३५] ऋग्वेद, १०/१४५ का जयदेवभाष्य।
[३६] कामगोत्रजा श्रद्धा नामर्षिका। ऋग्वेद, १०/१५१ का सायण-भाष्य।
[३७] संस्कृत वाङ्मय कोश, प्रथम खण्डः, पृ. ४७५।
[३८] सार्पराज्ञी नामर्षिका सैव देवता सूर्या। ऋग्वेद, १०/१८९ का सायण-भाष्य।
[३९] आत्मनो भाववृत्तानि जगौ वर्गस्तथोत्तमः।
उत्तमस्य तु वर्गस्य य ऋषिः सैव देवता॥ बृहद्देवता, २/८६।

को प्राण-रूप भी कहा गया है।[४०] प्राणपरक अर्थ लेने पर भावार्थ इस प्रकार होगा - इस सूर्य की दीप्ति शरीर में प्राण तथा अपान के मध्य विचरण करती है। पाँच प्राणों - प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान में ऊर्ध्ववायु का निर्गमन प्राण[४१] तथा अधोमुख वायु का प्रवाह अपान[४२] कहलाता है। यह प्राण व अपान की प्रक्रिया ही समस्त प्राणियों के जीवन का सूचक है। यह प्राणादि सूर्य की दीप्ति से ही विराजमान रहते हैं।[४३] इस प्रकार ऋषिका सार्पराज्ञी द्वारा दृष्ट यह सूक्त जो एक 'सूर्य' शब्द सूर्य, ज्ञानी तथा प्राण-आदि अनेक अर्थों को व्यक्त करता है, जिससे वैदिक शब्दों का अर्थगाम्भीर्य तथा उनमें निहित दार्शनिकता का पता चलता है तथा उनकी ऋषिका के अप्रतिम वैदुष्य का भी। ऋषिका सार्पराज्ञी द्वारा दृष्ट ये मन्त्र तैत्तिरीयसंहिता में अग्निहोत्र के सन्दर्भ में पुनराधान के अन्तर्गत कहे गए हैं।[४४]

इस प्रकार दार्शनिक क्षेत्र में ऋग्वेद-संहिता के मन्त्रों की द्रष्ट्री ऋषिकाओं का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। साथ ही वैदिक ऋषिकाओं के मन्त्रों में दार्शनिकता एवं लोकोपकारकता देखने को मिलती है।

डॉ. अर्चना कुमारी दुबे
असिस्टेन्ट प्रोफेसर,
रवीन्द्र निवास, क्वाटर नं. ८,
वनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान ३०४०२२

[४०] विष्णुपुराण, २/१०
[४१] प्राणो नाम प्राग्गमनवान्नासाग्रस्थानवर्ती। वेदान्तसार, १३।
[४२] अपानो नामावाग्गमनवान्वाय्वादिस्थानवर्ती। वही, १४।
[४३] यजुर्वेद, ३/५४।
[४४] पुनराधानमन्त्राः। तैत्तिरीयसंहिता, १/५/३/२-४।